प्राचीन राजस्थान की राजनीति स्थिति

*डॉ. गिरधारी लाल मीणा

शोध सारांश

राजस्थान भारतवर्ष का एक अविच्छिन अंग है। भौगोलिक दृष्टिकोण से राजस्थान का परिचय पूर्व–मध्य में अरावली पर्वत श्रंखला तथा पश्चिमोत्तर में मरूस्थलीय भागों का आधार मानकर प्राप्त किया जा सकता है।

अरावली पर्वत श्रृंखला आबू पर्वत के गुरूशिखर से आरम्भ होकर अलवर रेवाड़ी तक 692 कि.मी में फैली हुई है। यह विश्व की प्राचीनतम पर्वत श्रेणियों में से एक है। इसी ने राजस्थान को दो भागों मे विभक्त किया है। पहला दक्षिणी–पूर्व व दूसरा उत्तर–पश्चिमी भाग है। पहला भाग वर्षा जनित व दूसरा सूखा भाग है। पूर्वी क्षेत्र में जयपुर, दौसा, अलवर, भरतपुर, करौली, टोंक और कोटा के उत्तरी–पूर्वी क्षेत्र का कुछ भाग सम्मिलित है। दक्षिणी पूर्णी भाग मे प्रमुख नदियाँ चम्बल, बनास, बाणगंगा, ढूँढ़ नदियों का प्रवाह क्षेत्र कोटो, टोंक, सवाई–माधोपुर, करौली जयपुर, दौसा, अलवर, भरतपुर क्षेत्रों में रहा है। प्रचीनकाल में पश्चिमोत्तर भाग में दृषद्वति और सरस्वती नदियां प्रमुख रही है। इसी भाग में बनास की सहायक नदियों में कालीसिंध, कोठरी, खाड़ी, पार्वती नदियां है। लूनी, माहीं, घग्घर भी प्रमुख नदियां है।

जलवायु व वनस्पति के दृष्टिकोण से यह प्रदेश शुष्क माना गया है। अधिकांश भाग शुष्क ही रहता है। परन्तु पूर्वी–दक्षिणी भाग अपेक्षाकृत वर्षा जनित है। यहां 40–45 इंस वर्षा होती है। यहां के जंगल घने है। और अरावली पर्वमाला के व्यापक विस्तार ने व अनेक बड़ी छोटी नदियों ने इस कड़ी को पूरा किया।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से राजस्थान के प्राचीनकाल, मध्यकाल व ब्रिटिशकाल में अलग–अलग भागों के अलग–अलग नाम रहे हैं। बीकानेर–जोधपुर के भाग को महाभारत काल में जंगल, कुरूजांगल और माद्रेय जागंल कहते थे। इसके निकट का भाग संपादलक्ष्य कहलाता था। जिस पर कालांतर में चौहानों का अधिकार हो गया था। मध्यकाल और ब्रिटिशकाल में भी उक्त भू–खण्डों को किसी एक नाम से संबोधित नहीं किया गया था। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि, सल्पनत और मुगलकालीन इतिहासकार राजपूत शब्द को "राजपूतां" लिखा करते थे। अंग्रजों ने इसी आधार पर "राजपूताना" कहना आरम्भ किया। "राजपूताना" के आधुनिक इतिहास को भारतीय इतिहास पटल पर लाने का प्रथम श्रेय प्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड़ को जाता है। जिनकी प्रसिद्ध पुस्तक "एनाल्स एण्ड एण्टीक्वीटी ऑफ राजस्थान" है। उन्होने इस भूखण्ड को "राजवाड़ा" या राजस्थान कहा है। जो कालांतर में स्वतंत्र भारत के सविधान के एकीकरण के बाद राजस्थान कहा जाने लगा। राजस्थान के प्राचीन इतिहास को संक्षेप में निम्न प्रकार दृष्टिगत कर सकते हैः–जिस प्रकार भारत के इतिहास को जानने के निमित्त उसे कई भागों में विभक्त किया गया है। उसी प्रकार राजस्थान के इतिहास को भी कई भागों में विभक्त किया गया है। जो अध्ययन की सटीक व्याख्या हेतु समीचीन रहेगा। अरावली पर्वत श्रृंखला से उद्गामित नदियों और मरूस्थलीय भागों को आधार बनाकर इतिहासकारों ने निम्न काल विभाजन किया हैः–

प्रस्तरकाल :– अध्ययन की दृष्टि से इस काल को पूर्व पाषाणकाल और उत्तर पाषाणकाल में विभक्त किया है। पूर्व

पाषाणकाल में पुरातत्ववेत्ताओं ने सृष्टि का आरम्भ 6 लाख वर्ष पूर्व माना है। नदियों और कन्दराओं में मानव का विकास आरम्भ हुआ। लूणी नदी के किनारे पोकरा और बड़ी ढ़ाणी से प्रस्तर युग के उपकरणों की प्राप्ती हुई। हाड़ौती क्षेत्र में चम्बल किनारे, अलवर, जयपुर, वैराठ के पर्वतीय क्षेत्रों में तो कई कन्दराओं और गुफाओं में इस काल के विभिन्न अवशेष प्राप्त हुए है। जिनमें आदिमानव द्वारा चट्टानों पर जंगली जानवरों के चित्र भी उत्कीर्ण है।

उत्तर पाषाणकाल में बनास, गंभीरी, बेड़च, तथा चम्बल आदि घाटियों के किनारे वर्तमानकालीन बांसवाड़ा, डुंगरपुर, भीलवाडा, बूंदी, कोटा, जयपुर, अलवर, टोंक में मानव निवास करता था। इस काल में कुल्हाडी, चाकू, तीर का प्रयोग हुआ। निवास के लिये मिट्टी की दीवारें व छत के लिए घास–फूस टहनियों का उपयोग प्रारम्भ हुआ। पका हुआ भोजन, बर्तन बनाना, पत्थर रगड़ कर अग्नि जलाना आदि सीखने की प्रक्रिया इस काल में आरम्भ हुई।

ताम्रयुगीन सभ्यता :– जयपुर राज्य के अन्तर्गत आधुनिक जयपुर, सवाई–माधोपुर, सीकर, झुन्झनु, चाकसू, दौसा और अलवर जिले का पश्चिमी व दक्षिणी क्षेत्र था। तत्कालीन राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत जयपुर के पुरातत्व विभाग द्वारा बैराठ, सांभर, नगर व रेड नामक स्थलों पर पुरातात्विक खनन कार्य हुए। बैराठ में बीजक की पहाड़ी पर मौर्य युगीन बौद्ध मंदिर के अवशेष, भीमजी की डूंगरी के पास चट्टान पर मौर्य सम्राट अशोक का पर्वतीय शिलालेख उत्कीर्ण है। यहीं से 2 मील की दूरी पर इस्माइलपुर गांव से हजारों की संख्या में मौर्यकालीन आहथ मुद्राएं मिली है। बैराठ के जोधपुरा नामक ग्राम में उत्खनन के दौरान सबसे नीचे के धरातल से प्राप्त कोयले के नमूनों का "कार्बन–14" विधि से परीक्षण करने पर इनका समय 2500 से 2200 ई. पूर्व सिद्ध हुआ है। 1978 में ही नीमकाथाना (सीकर) में हड़प्पा युगयीन तांबे के तीर का अग्रभाग व तांबे की 58 कुल्हाड़ीयां मिली हैं। ये सब ताम्र सामग्री समीपवर्ती पहाड़ियों से निकालकर यहीं पर तांबा गलाकर ढाली जाती थी।' पुरातत्व विभाग के अधीक्षक, डा.आर.सी. अग्रवाल तथा विजय कुमार ने 1977 ई. मे सीकर के कांटली नदी के उद्गम स्थल पर गणेश्वर टीले की खुदाई से प्राप्त अवशेषों का काल रेड़ियोकार्बन विधि के परीक्षण के आधार पर लगभग 2000 ई.पू. सिंधु सभ्यता के समकालीन बताया है।

1978 में भारतीय भू–गर्भ सर्वेक्षण विभाग द्वारा जयपुर के पास जयपुर आगरा रोड़ के बांये किनारे पर स्थित स्थानों जिनमे बैनाड़ा, फिलसन, बिहारीपुरा, झर, बांसखों, दौसा, झालाना की पहाड़िया, मोती डूंगरी ओर जयपुर दिल्ली राजमार्ग पर अचरोल ग्राम में प्रागैतिहासिक सामग्री की खोज की गई, जो हजारों वर्ष पहले की है। जहां पर पत्थर के छोटे औजार, गेरूएं रंग के कतिपय मृदभांड मिले है, जिन्हे माईकोलिथ (Microliths) कहा जाता है। इनके अवशेष वर्तमासन में हवामहल के अल्बर्टहाल के पुरातत्व संग्रहालय में सुरक्षित है।

राजस्थान में आर्य :– आर्यों ने वैदिक साहित्य की रचना का प्रारम्भ दृषद्वती नदी (बीकानेर) के किनारे पर किया, जो सरस्वती की तरह अदृश्य हो गई है। इस रचना का प्रारम्भ समय 1300 ई.पू. माना जाता है। इसी समय आर्य, सरस्वती ओर दृषिद्वती नदियों के किनारे आकर बसने लगे। इसके प्रमाण में भूरे मिट्टी के भाण्ड प्रस्तुत किये जा सकते है। आज से लगभग 4000 ई.पू. आहड़ और कालीबंगा की सभ्यताऐं उन्नत अवस्था में थी। कालीबंगा जहां सिंधु सभ्यता का अंग थी और उत्खनन से प्राप्त अवशेष कालीबंगा के मानव की उन्नता जीवन शैली को रेखांकित करते है। यहां पर नगर, भवन निर्माण, दुर्ग का निर्माण, मानव के दैनिक जीवन भोग हेतु बर्तन व सौन्दर्य सामग्री प्राप्त हुई है। कालीबंगा से प्राप्त अवशेष पाकिस्तान के "कांट–ड़ीगी" नामक स्थान से प्राप्त अवशेषों से साम्यता रखते है। कालीबंगा हड़प्पा पूर्व की सभ्यता थी। प्राप्त अवशेषों से सभ्यता अधिक प्राचीन तथा अविकासित अर्थव्यवस्था की मानी जाती है। लेकिन इनके निर्माता कौन थे तथा हडप्पा काल में इनका क्या हुआ? यह प्रश्न ही रह जाता है।

आहड़ सभ्यता उदयपुर से दो–तीन मील की दूरी पर है। इसको ताम्रवती नगर भी कहते है। क्योंकी यहां पर ताम्र औजार मिले है। यह भी 4000 वर्ष पुरानी सभ्यता थी। जिसमें मानव ने आहड़ नहीं के किनारे अपनी अपेक्षाकृत

उन्नत जीवन शैली को विकसित किया था। यहां से प्राप्त छः ताम्बे की मुद्राऐं, तीन मुहर, दैनिक जीवन की वस्तुएं– घड़े, कटोरियां, प्याले, मटके, भण्डार, कलश, ढक्कन, चाक आदि इनकी उन्नत जीवन शैली के परिचायक है।

गिलूण्ड नामक स्थान पर खुदाई से आहड़ के विस्तार की जानकारी मिलती है। आहड़ इस युग की ताम्र पाषाण संस्कृति का प्रमुख केन्द्र था और नदियों के किनारे–किनारे इस सभ्यता का प्रसार समुचे बनास, बेड़स व चम्बल के कांठे में हो गया था। लेकिन फिर यहां यह प्रश्न खड़ा होता है। कि आहड़ और गिलूण्ड के मूल निवासी कौन थे? और कैसे उनका पतन हुआ? प्रो. सांकलिया के अनुसार "ई.पू. 2000 के लगभग पड़ौस से आकर लोग बसने लगे थे। यह प्रदेश साधन सम्पन्न और उत्पादक था।"

राजस्थान में आर्यों का आगमन :– यह सर्वविदित है कि आर्यों ने आरम्भिक वैदिक साहित्य की रचना राजस्थान की दृषिद्वति और सरस्वती नदियों के किनारों पर की थी। इस रचना का काल 1300 ई.पू. रहा होगा। और इसी समय आर्य इन नदियों के किनारों पर आकर बसने लगे थे। इसके साक्ष्य के रूप में भूरे मिट्टी के बर्तन प्रस्तुत किये जा सकते है। अनूपगढ़ ढ़ेर और तरखानवाला के उत्खनन से बर्तनों के टुकड़े मिले है। यह विदित है कि गंगा के दौआब की और से आर्य अग्रसर हुऐ थे। अब तक प्राप्त ज्ञात स्त्रोतों से यह सिद्ध हो चुका है कि आर्यों ने इन्द्र और सोम को समर्पित मंत्रों की रचना रजस्थान के भू–भाग में ही की थी। उनको यज्ञों का महत्व और जीवन मुक्ती के ज्ञान का आभास भी सरस्वती नदी के किनारे पर ही हुआ था। राजस्थान के पुरातत्व विभाग के सौजन्य से नोह (भरतपुर), जोधपुर (जयपुर), विराटनगर (जयपुर), सुनारी (झुन्झुनु) आदि स्थानों पर उत्खनन से प्राप्त सलेटी रंग के चित्रित भाण्ड प्राप्त हुए है। यह सभी आर्य संस्कृति काल के माने गये है। रामायण में पुष्कर और महाभारत में विराट नगर का उल्लेख है। अलवर, भरतपुर, व जयपुर उस समय मत्स्य राज्य के भाग थे। तथा इसकी राजधानी विराट नगर थी। महाभारत के अनुसार बनास नदी के तटवर्ती क्षेत्र का शासक श्रुतयुद्ध कुरूक्षेत्र में कौरवों की और से लड़ा था।

मत्स्य प्रदेश का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में भी आता है, इससे स्पष्ट है कि यह जनपद पहले भी था। इसकी स्थिति के विषय में विभिन्न अभिमत है, किन्तु कुरूक्षेत्र और मत्स्य को पांचाल तथा शूरसेन देश के अन्तर्गत मानना चाहिये। मनु के कथनानुसार उत्तर–पश्चिम भारत में कुरूक्षेत्र या थानेश्वर का निकटवर्ती प्रदेश, पांचाल या कान्यकुब्ज का अंचल, शूरसेन व मथुरा प्रदेश थे। इन सब जनपदों के समीप ही मत्स्य देश था।

महाभारत के भीष्म पर्व में तीन मत्स्य देशों का उल्लेख मिलता है –

1. पश्चिम में स्थित मत्स्य देश,
2. पूर्व में चेदी (बुंदेलखण्ड) मे तथा
3. दक्षिण मे दक्षिण कोसल के निकट।

किन्तु मनु द्वारा प्रतिपादित मत अधिक मान्य है जिसमें आदि–मत्स्य का वर्णन किया गया है। इसी आदि मत्स्य देश में पांडुओं ने अज्ञातवास किया था। जयपुर राज्य के अन्तर्गत "बैराठ" और अलवर राज्य के अन्तर्गत "माचाड़ी" नामक दो प्राचीन गांवों के नाम क्रमशः "विराट" तथा "मत्स्यपुरी" के प्रतीक आज भी विद्धमान है। मत्स्य के समीप जिस कुशला जनपद का उल्लेख है वह कुशलगढ़ भी माड़ी से बैराठ जाने रास्ते पर है। महाभारत कालीन कुरूक्षेत्र में पटियाला से यमुना के पूर्व तक का देश भी इसमें शामिल था। अलवर के उत्तरी भाग की तिजारा तहसील आदि कुरूक्षेत्र के अन्तर्गत थे और शूरसेन के अन्तर्गत मथुरा का पश्चिमी भाग, ब्रज, अलवर का पूर्वी हिस्सा, भरतपुर, धौलपुर और करौली का बहुत बड़ा भाग सम्मिलित था। यही कुरूक्षेत्र तथा थानेश्वर का क्षेत्र मत्स्य कहलाता था।

विराटनगर या बैराठ के बारे में विस्तार से अध्ययन प्रस्तुत शोध की दृष्टि से इसलिये समीचीन रहेगा क्योंकि यह

स्थान प्रस्तुत शोध का प्रमुख केन्द्र है। भौगोलिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से इसलिये भी महत्वपूर्ण है क्योंकि विराट देश अति प्राचीन है। इसका उल्लेख चीनी और मुस्लिम इतिहासकारों ने भी किया है। इस क्षेत्र पर मुसलमानों के अनेक हमले और धर्म परिवर्तन के लिये अत्याचार भी हुए। सम्राट अशोक के समय में बैराठ नगर अति समृद्धिशाली था। राव बहादुर चिन्तामणि विनायक वैद्य ने भी इसे शूरसेन के पश्चिम में माना है। शूरसेन की राजधानी मथुरा थी। वर्तमान विद्वानों ने यह मान लिया है कि, राजपूताने का बैराठ ही आदि–मत्स्य या विराट देश है। विराट और मत्स्य अति प्राचीन नाम है और उनका संबन्ध इसी स्थान से है। मत्स्यों का इतिहास आति प्राचीन है, क्योकि महाभारत के उद्योग व विराट–पर्व में विराट नगर को एक समृद्ध नगर बताया गया है। युधिष्ठर ने कहा था "मत्स्यराज विराट धर्म प्रिय साहसी, नीति निपुण व हमारे हितैषी है। जनपदों की इस गिनती मे पांचाल, चेदि, मत्स्य, दशार्ण, नवराष्ट्र, मल्ल, शाल्व, युगन्धर अवन्ति अकुन्तिराष्ट्र आदि नाम गिनाये गये है।"

इस प्रकार पूर्वी राजस्थान का जो वर्णन "मत्स्य" के नाम से महाभारत तथा अन्य कई पुराणों में मिलता है, उसके आधार पर कालान्तर में जयपुर, अलवर मे कछवाहे राजपूत, भरतपुर में सिनसिवार जाट, धौलपुर में बमरावलिया जाट, तथा करौली में यादव वंशीय राजपूत शासन में रहे थे। इन राज्य परिवारों की एक विचित्र श्रृंखला मिलती है।

राजा ऊपरीचर भारत के प्रसिद्ध सम्राट हुए है। इनकी राजधानी चन्देरी थी। इनके पांच पुत्रों में ब्रहद्रथ मगध देश के राजा हुए। कुशाम्ब, कौशम्बी के राजा हुए और मत्सिल "मत्स्य" ढुंढाड़ देश के अधिपति हुए। प्रत्यगृह और कुरू दो अन्य पुत्र थे। जब मत्सिल ढूंढाड़ा देश के राजा बने तब ढूंढाड़ा देश "मत्स्य देश" के नाम से प्रसिद्ध हुआ और मत्स्य नाम का नगर बसाया। यह नगर आज भी प्रतापगढ़ तहसील, जिला अलवर में माचाड़ी नाम से स्थित है। आज भी वह स्थान देखा जा सकता है। राजा मत्सिल के समय में इस नगर में यौधेय, पौन्डरैय, बच्छल आदि अन्य जातियां बसती थी जो मत्स्य जाति से भिन्न थी। प्राचीन तंत्र ग्रन्थों में आजकल के जयपुन–अलवर क्षेत्र को मत्स्य देश के अन्तर्गत माना गया है। राजा मत्सिल ने यमुना और सतलज के मध्यवर्ती भाग पर भी अपना अधिकार कर लिया और सतलज के तट पर "मत्स्यवाट" नामक नगर बसाया, जिसे अब "मांछीवाड़ा" कहते है। कुछ लोग वर्तमान मस्लीपट्टन संबन्ध "मत्स्यपतनम" से स्थापित करते है। इस क्षेत्र में जो स्थान पाये जाते है, जैसे पाण्डुपोल, उनसे स्वतः सिद्ध होता है कि विराट राजा का राज्य यहीं कहीं था और पांडुओं का अज्ञातवास मत्स्य राज्य में ही हुआ था।

इस प्रदेश के राज्यों में परस्पर एक घनिष्ठ संबन्ध भी था। राजा धर्मपाल यादव की 13वीं पीढ़ी में राजा तहनपाल हुए थे। राजा तहनपाल के पन्द्रह पुत्रों में से ज्येष्ठ मदनपाल के वंशाजों का राज्य धौलपुर में, उनमे से छोटे धर्मपाल का राज्य करौली में और तीसरे भुवनपाल के वंशजोंु का राज्य भरतपुर में बताया गया है। जाट लोग अपने को यदुवंशी कहते हैं। कहा जात है कि जाटों में विवाह करने के कारण ये लोग जाट कहलाये। करौली के राजा तो अब तक यादव राजपूत है। अतः इन तीनों राज्यों में एक वंश की तीन शाखाएं प्रतिष्ठित है। प्रस्तुत भौगोलिक और ऐतिहासिक स्थिति के अनुसार, जो सन् 1750 से अभी तक उसी रूप में है, इस प्रदेश को ब्रज मण्डल और मेवात, दो भागों में विभाजित कर सकते है। उपर्युक्त वर्णन के अनुसार पूर्वी राजस्थान में राजपूतों, जाटों और यादवों का होना तो है। परन्तु इनके पूव इस क्षेत्र में आदिम मीणा जनजाति की भूमिका और योगदान का अध्ययन आवश्यक है। क्योकी बैराठ के चारों और लगभग 70–80 कि.मी. के दायरे में मीणों के थोंक और ग्राम आज भी विद्धवान है। जिनकी शोधार्थी ने जाकर जो जानकारी जुटाई है, उससे यह प्रमाणित होता है कि उनका अस्तित्व 400–1000 साल पुराना है। जो समय के साथ–साथ परिवर्तित होता रहा है। कोस के इस क्षेत्र में ही बाण गंगा व उसकी सहायक नदियों का ही एक जाल सा रहा है। जिससे यहां जीवन की उननती और उत्पादकता से जीवनस्तर उच्चतम स्तर तक पंहुचा। वैदिक काल से राजपूत काल तक इस क्षेत्र और भू–भाग का विकास किस प्रकार हुआ व केन्द्रीय सत्ता से इसका क्या सम्बन्ध रहा, यह व्यापक शोध का विषय है। मीणा जनजाति का मत्स्यों

से सम्बन्ध था या नहीं, उसके लिये इसका अध्ययन आवश्यक है।

मत्स्य का ठिकाना एकदम सही है और उसकी राजधानी का नाम 'विराट' था। जो जयपुर के वर्तमान "बैराठ" नामक स्थान पर है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार अलवर की अरावली पहाड़ियों तथा यमुना के बीच का समस्त प्रदेश, पश्चिम में मत्स्यों तथा पूर्व में सूरसेनों द्वारा अधिकृत था। इसके दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व सीमांत में दशाणे था। जो मत्स्य भू–भाग में सम्मिलित था। कामां, मथुरा, और बयाना सूरसेन में सम्मिलित थे। पूर्व में पांचालों के पास रूहेलखण्ड और गंगा का दौआब प्रदेश था। दशाणे की रालधानी विदिशा थी जिसे कनिंघम ने 'मेल्सा' या 'बैसनगर' कहा है, यह नदी बैतवा कहलाती है। जो भोपाल से निकलकर उज्जैन के पूर्व में यमुना में मिलती है। ड़ॉ. हरिशंकर शर्मा व ड़ॉ. सरोज पावा ने राजस्थान के इतिहास की रूपरेखा में लिखा है कि "विराट नगर" पर्वतमालाओं से सुरक्षित है महाभारत कालीन मृद्भाण्ड भी यहां से प्राप्त हुए है। जिन पर चित्रांकन है तथा औजारों में लोहे की कुल्हाड़ियाँ व भाले भी है।

मत्स्य जाति अलयवर, जयपुर तथा भरतपुर के नामों से जाने गए भू–भागों में है। इस जाति के द्वैतवन नामक राजा ने अश्वमेघ किया था। यह राजा सम्भवतः जयपुर या अलवर के आस–पास राज्य करता था। यहीं द्वैतवन होना चाहिए। मत्स्य की स्थिति के बारे एक और उल्लेख मिलता है। जिसमें उसे दिल्ली जयपुर तथा आगरा के बीच का उत्तरी तथा पश्चिमी प्रदेश कहा गया है।

कनिंघम ने अपनी पुस्तक न्यू इन्डियन ऐन्टीकेरी (1939–40) में इस राज्य की सीमा झुन्झुनू से पूर्व में कोटकासिम (अलवर) तक 112 कि.मी. कोटकासिम से दक्षिण में चम्बल तथा बनास तक 241 कि.मी. ओर अजमेर से उत्तर में झुन्झुनू तक 210 कि.मी. निश्चित की है। इस प्रकार इसका कुल क्षेत्रफल 563 कि.मी. होता है। ड़ॉ. हरमन गेटे (डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स 1964 बूंदी) के अनुसार "मत्स्य देश के कई थोक ओर समूह विभिन्न कारणों से दक्षिण दिशा की ओर पलायन कर गए ओर उनका निवास चम्बल का किनारा, कोटा, बून्दी का पहाड़ ओर नीचे जाकर मालवा के पठार स्थायी रू‍प से बनें।"

रावत सारस्वत ने अपनी पुस्तक मीणा इतिहास में मत्स्य और मीणों के सम्बन्ध को निम्न प्रकार बताया है – "इस प्रकार मत्स्य देश की भौगोलिक स्थिति निर्विवाद रू‍प से स्पष्ट है। यह भी कोई संयोग की बात नहीं है कि मत्स्य देश के नाम से पहचाने जाने वाला भू–भाग आज के मीणों का प्रधान निवास रहा है। यह तथ्य प्रमाणित करने के लिये इतना ही पर्याप्त है कि आज की मीणा जाति इन्ही प्राचीन मत्स्यों की वंशज है।"

ड़ॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने पाणिनी कालीन भारत में जन और जनपद को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "जनपद या जातीय भूमियों के इतिहास में तीन अवस्थायें मानी गई हैं। सबसे पहले घुमंतु कबीलों का युग था जो 'जन' के सदस्य आपस में रक्त सम्बन्ध से बंधे थे जो कुल कहलाता था। कबीले के भीतर कुटुम्ब के विस्तार की यह दूसरी अवस्था थी। यही घुमन्तु 'जन' समय पाकर स्थान विशेष पर बस गये और उसका पद या ठिकाना 'जनपद' कहलाया। 'जन' के जो क्षत्रिय थे उन्ही से 'जनपद' की ठकुराई कायम हुई और 'जनपद' का नाम भी उन्ही के नाम से हुआ। इस तीसरी स्थिति से आगे चल कर ही पुरराज्यों तथा एकतंत्र प्रणाली का प्रारम्भ हुआ।

"गण या संघ में प्रतिनिधित्व का आधार कुलों का संगठन था। प्रत्येक कुल एक इकाई माना जाता था। एक कुल. एक प्रतिनिधि शासन मुं भाग लेने का अधिकारी होता था जो राजा कहलाता था। महाभारत के सभापर्व (14–2) में 'गृहे गृहे हि राजानः' कहा गया है। लिच्छवी गण में 7707 कुल और उतने ही राजा (राजाने) थे। पाणिनी के समय संघ–आन्दोलन छा गया था। मोटे तौर पर विदित होता है कि देश प्राच्य भाग में राज्य–प्रथा तथा उदीच्य भाग में संघों की प्रथा अधिक प्रचलित थी। राजस्थान में ही मत्स्यों के अतिरिक्त यौधेय मालव साल्व आदि अनेक गणों के हेने के प्रमाण मिले है। जाटों के गणराज्य भी अवश्य रहे होंगे। इन गणों तथा संघों के कार्यकलाप भी भिन्न–भिन्न

होते थे। मत्स्य लोगों का संघ किस प्रकार का था, उसकी कल्पना करते समय प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित नाना प्रकार के संघों पर ध्यान देता होगा। संघों की सूची में पार्वतीय आयुधजीवी संघों का भी उल्लेख है। ये सुघ पश्चिमी भारत में थें–"प्रतीच्याः पार्वतीयः"। इन आयुधजीवी संघों में 'पूग' तथा 'व्रात' नामक आयुधजीवी विभेद भी होते थे, जो लूटमार का व्यवसाय करते थे। व्रात उन लड़ाकू जातियों की संज्ञा थी जिनका आर्यों के साथ संघर्ष हुआ था ओर जो लूटमार करके आपना जीवनयापन करती थी। ऋग्वेद मे आर्य यौद्धाओं को 'व्रात साह' कहा गया है। श्रोत सूत्रों में भी व्रात्य का उल्लेख है। लातायन श्रोत सूत्र से ज्ञात होता है कि व्रात्यों के मागध या बदीसूत ही उनकी लोक गाथाओं को गाकर सुनाते तथा धार्मिक कर्म भी करते थे। व्रात लोग तखते का फट्टा जड़ा हुआ खड़खड़िया रथ रखते तथा उबड़–खाबड़ मार्गो पर चलते थे। ये बिना डोरी तथा बाण का धनुष रखते थे, भेड़ की खाल की पोस्तीन पहनते तथा कुछ लाल ओर कुछ काले कपड़े पहनते थे। संधबद्ध होने पर भी व्रात लोग ऊँचे स्थान पर बने रहते थे।"

ह्वेनसांग ने मत्स्यों को पशुपालक, युद्धप्रिय, और राज्य प्रणाली वाले बताया है। ये लोग अपने पशुधन की रक्षा के लिये युद्ध हेतु तत्पर रहते थे और यही कारण था कि इनको युद्धप्रिय कहा गया है। उसने लिखा है कि यहां बैलों और भेड़ों जैसे जानवरों की बहुतायत है। कनिंघम ने भी Ancient Geography of India मे लिखा है कि मत्स्यों के ये लक्षण ठीक प्रतीत होते है क्योंकी उत्तरोत्त काल में जयपुर और आसपास के राज्यों से दिल्ली और आगरा के मुस्लिम शहरों और अंग्रेज छावनियों को मांस हेतु भेड़ें भेजने का काम करते थे। लेकिन रावत सारस्वत ने मीणा इतिहास में लिखा हैं कि कनिंघम का यह कथन आंशिक रूप से ही सही है उनके अनुसार अधिकांश मत्स्य लोग आयुधजीवी अवश्य थे। लेकिन इनका इतिहास, परम्परा तथा सामाजिक स्थिति का अध्ययन करने पर कनिंघम के उपरोक्त विचार असंगत प्रतीत होते है।

अध्ययन और शोध को आगे बढ़ाने से पूर्व शोध के विषय – पूर्वी राजस्थान के तत्कालीन आम्बेर जयपुर राज्य, भरतपुर राज्य, धौलपुर रियासत और करौली रियासत की ऐतिहासिक और भौगोलिक पृष्ठभूमि से परिचित होना बड़ा उपयोगी रहेंगा। इनकी पृष्ठभूमि की जानकारी, केन्द्रीय शासन में इन शासकों की भूमिका एवं योगदान को समझने के साथ ही इनके पूर्ववर्ती शासकों के बारे में भी जानकारी प्राप्त करने में सहायक रहेगी।

***व्याख्यता**
इतिहास विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय, दौसा (राज.)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आचार्य, सूर्यनारायण शर्मा : खण्डेले का इतिहास शेखावाटी शोध संस्थान, झुन्झुनू, 1976
2. ठा. भगवत सिंह : चॉपावत राठौड़, भगवतसिंह प्रकाशन, पोखरण, 1978,
3. बदनोर, ठा. गोपाल सिंह : जयमलवंशप्रकाश, गोपाल प्रकाशन, बदनोर, 1975
4. भटनागर, डॉ. वीरेन्द्र स्वरूप : सवाई जयसिंह, स्टूडेंट बुक कम्पनी, जयपुर, 1984
5. चुंडावत लक्ष्मी कुमारी : सांस्कृतिक राजस्थान, द्वितीय संस्करण, साहित्यागार, जयपुर, 2005,
6. फॉर्ब्स, अनु. पं. गोपालनारायणः रासमाला (5 भाग), मंगल प्रकाशन, रामगंज, जयपुर, 1976.
7. गहलोत, जगदीश सिंह : मारवाड़ राज्य का इतिहास, वैदिक यंत्रालय, अजमेर, 1986.